4

भाषा : व्यवस्था और संरचना

-रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव

खंड I

भाषा, भाषिक व्यवस्था और संरचना

भाषा और भाषा-बोध

भाषा हमारे सम्प्रेषण का महत्त्वपूर्ण माध्यम और भावबोध का अन्यतम साधन है। भाषा के सहारे व्यक्ति न केवल अपने विचार व्यक्त करता है, बल्कि उसे दूसरे तक सम्प्रेपित भी करता है। सम्प्रेषण-व्यापार के संदर्भ में यह देखा जा सकता है कि इसके एक छोर पर 'सम्बोधक' होता है जो किसी 'संदेश' को भेजता है और दूसरे छोर पर 'सम्बोधित' होता है जो इस संदेश को ग्रहण करता है। सम्बोधक और सम्बोधित के सम्प्रेषण-व्यापार के माध्यम के रूप में भाषा रहती है। इस भाषा के सहारे सम्बोधक अपने अव्यक्त संदेश को व्यक्त करता है और इसी भाषा में अभिव्यक्त संदेश को अर्थ के रूप में सम्बोधित ग्रहण करता है।

अभिव्यक्ति के स्तर पर भाषा के दो रूप सम्भव हैं–(1) मौखिक और (2) लिखित। मौखिक रूप में अभिव्यक्ति का साधन ध्वनि है। सम्बोधक के रूप में वक्ता संदेश को भाषा में बाँधकर मुँह से उच्चरित करता है और सम्बोधित के रूप से श्रोता उसे सुनकर अर्थग्रहण करता है। इसके विपरीत लिखित रूप में भाषिक अभिव्यक्ति का साधन लेखन होता है। इस संदर्भ में सम्बोधक के रूप में लेखक संदेश को लिखकर व्यक्त करता है और सम्बोधित के रूप में पाठक पढ़कर उसका अर्थ समझता है।

स्पष्ट है, हम अपनी बात दूसरों तक पहुँचाने और दूसरों की बात समझने के लिए भाषा का सहारा लेते हैं। न केवल हम आमने-सामने रहकर एक-दूसरे से बातचीत करते हैं, बल्कि भाषा के सहारे स्थान और समय की दूरी को लाँघकर अपनी बात दूसरों तक

पहुँचाने में समर्थ भी होते हैं। हमारे जीवन के विभिन्न क्रिया-कलाप भाषा के सहारे इस प्रकार बँधे होते हैं कि उसके बिना हम सामाजिक रह ही नहीं सकते। भाषा के सम्प्रेषण-व्यापार के सहारे ही व्यक्ति अपने भाषायी समुदाय के अन्य सदस्यों के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है, उनके साथ विचार-विनिमय करता है, और एक-दूसरे का सहयोग प्राप्त करता है।

भाषा सम्प्रेषण का माध्यम ही नहीं, अपितु हमारे भावबोध का साधन भी है। हम सोचते हैं तो भाषा के सहारे और किसी बात को समझते-समझाते हैं तो भी भाषा के सहारे। हमारे स्मृतिकोश और चिंतन-प्रक्रिया का आधार भाषा ही है। मानव-मन की सृजनात्क शक्ति की अनुपम देन के रूप में यह भाषा ही वाह्य जगत और हमारे भावबोध के बीच सेतु का काम करती है। यही कारण है कि भाषा की व्याकरणिक कोटियों के रूप में जिस लिंग (पुल्लिग और स्त्रीलिंग), वचन (एकवचन और बहुवचन), काल (वर्तमान, भूत और भविष्य) आदि की बात की जाती है, वे भौतिक जगत के स्वीकृत तथ्यों से भिन्न होते हैं। इस बात पर बल देने की आवश्यकता है कि भौतिक जगत का लिंग (सेक्स), व्याकरणिक लिंग (जेंडर) नहीं होता, अन्यथा निर्जीव पदार्थों को संकेतित करने वाले शब्दों को हम पुल्लिंग या स्त्रीलिंग के रूप में ग्रहण नहीं करते और न एक ही भौतिक वस्तु को संकेतित करने वाले दो पर्यायवाची शब्दों में हम लिंगभेद की कल्पना करते।

इसी प्रकार वाह्य जगत के भौतिक धरातल पर वचन की दृष्टि से 'एक' होकर भी व्यक्ति भाषा-प्रयोग के संदर्भ में 'बहुवचन' हो सकता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्यों पर ध्यान दें

	भाषा-प्रयोग	भौतिक धरातल	भाषिक सन्दर्भ
1.	तू कहाँ जा रहा है?	एक व्यक्ति	एकवचन
2.	(क) तुम कहाँ जा रहे हो?	एक व्यक्ति	बहुवचन
	(ख) आप कहाँ जा रहे हैं?	एक व्यक्ति	बहुवचन
3.	(क) तुम लोग कहाँ जा रहे हो?	एक से अधिक व्यक्ति	बहुवचन
	(ख) आप लोग कहाँ जा रहे हैं?	एक से अधिक व्यक्ति	बहुवचन

भाषा-प्रयोग के 2 (क) और (ख) वाक्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि भौतिक धरातल पर संख्या में जो 'एक' है वह भाषा-बोध के संदर्भ में बहुवचन है। भाषाबोध के संदर्भ में 'वचन' मात्र संख्या को व्यक्त नहीं करता। वह तो वक्ता के सामाजिक बोध का भी संवाहक है। किसे हम अपने से नीचे या ऊपर स्तर का समझते हैं; किसको हम आत्मीय और घनिष्ठ मानते हैं और किसे अपरिचित और अजनबी; किसको हम आदर की दृष्टि से देखते हैं और किसे तुच्छ समझते हैं; कौन सा पेशा हमें उच्च वर्ग के नज़दीक ले जाता है और कौन सा निम्नवर्ग की ओर—ये सब संसार को देखने की दृष्टि देते हैं। इस दृष्टि पर हमारा वचनबोध आधारित रहता है। इसीलिए हम एक ओर कहते है—'अनुराधा आई है' तो दूसरी ओर बोलते हैं—'अनुराधा जी आई हैं'। इसी प्रकार कहा जाता है कि 'धोबी आज आया था' पर उसके साथ बोला जाता है—'प्रोफ़ेसर आज आए थे'। कहते हैं—'बड़े भाई आज आए थे' पर छोटों के संदर्भ में बोलते है—छोटा भाई आज आया था'।

भाषा के सहारे जिस प्रकार हम भौतिक धरातल के लिंग और वचन को अपने विचार-बोध में रूपांतरित करते हैं, उसी प्रकार भौतिक 'समय' को भी हम व्याकरणिक 'काल' में बदल लेते हैं। यही कारण है कि एक ओर विगत घटना को हम भूतकाल से जोड़ सकते हैं और वर्तमान काल से भी, तथा दूसरी ओर भावी घटनाओं को भविष्यकाल के संदर्भ में देख सकते हैं और उसे वर्तमान काल की सीमा में भी खींच सकते हैं। उदाहरण के लिए नीचे दिए वाक्यों पर ध्यान दें

भाषा-प्रयोग	भौतिक धरातल	भाषिक संदर्भ
1. (क) कालिदास ने शकुंतला की रचना की थी।	विगत	भूतकाल
(क) कालिदास ने शकुंतला की रचना की है।	विगत	वर्तमानकाल
2. (क) मोहन एक साल बाद विदेश जाएगा।	भावी	भविष्यकाल
(ख) मोहन एक साल बाद विदेश जा रहा है।	भावी	वर्तमानकाल

ऊपर दिए गए तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लिंग, वचन, काल आदि विभिन्न व्याकरिणक कोटियों का आधार हमारा भावबोध है। वे भौतिक धरातल की इकाई न होकर भाषिक स्तर की संकल्पनात्मक इकाइयाँ हैं।

भाषा और भाषाज्ञान

सम्प्रेषण की आवश्यकता के कारण हम कभी वक्ता या लेखक की भूमिका निभाते हैं और कभी श्रोता या पाठक की। बातचीत के दौरान हम एक समय पर वक्ता के रूप में अपनी बात दूसरे से कहते हैं और दूसरे समय श्रोता के रूप में दूसरे की बात सुनते और समझते हैं। हमारा भाषा-व्यवहार वक्ता/लेखक और श्रोता/पाठक की दो भूमिकाओं के बीच सिद्ध होता चलता है। इन दो भूमिकाओं के साथ सम्प्रेषण तभी सम्भव हो पाता है जब व्यवहार में आने वाली भाषा का ज्ञान वक्ता/लेखक और श्रोता/पाठक, दोनों को ही हो।

यह जरूरी है कि वक्ता और श्रोता के भाषाज्ञान की एक समान आधारभूमि हो। वक्ता के रूप में कोई बात कहने के लिए जिस भाषाज्ञान को व्यक्ति व्यवहार में लाता है और उसकी जानकारी श्रोता को न होगी, तो वह कही हुई बात को समझ नहीं पाएगा। उदाहरण के लिए अगर वक्ता के भाषाज्ञान की आधारभूमि 'हिन्दी' है और श्रोता की 'रूसी' या 'फ्रेंच', तो वक्ता के भाषाज्ञान के आधार पर कहे गए हिन्दी के वाक्य का अर्थग्रहण श्रोता को नहीं हो पाएगा। विचार-विनियम की कड़ी कहीं टूट न जाए, इसके लिए यह आवश्यक है कि वक्ता और श्रोता के बीच कुछ विभिन्नताओं के बावजूद भाषाज्ञान की एक समान आधारभूमि हो।

अपने भाषाज्ञान के आधार पर ही व्यक्ति वक्ता और श्रोता के रूप में विविध संदर्भों में भाषा का प्रयोग करने में सक्षम होता है। भाषा-व्यवहार के समय भले ही व्यक्ति अपने भाषाज्ञान के प्रति सचेत न हो और अपनी भाषा-क्षमता के बारे में नियम के रूप में कुछ भी कहने में समर्थ न हो, पर अज्ञात रूप से भाषा के नियमों का वह सही प्रयोग जरूर करता है। अगर वह ऐसा नहीं करता होता, तो वह अपनी भाषा में शुद्ध वाक्य नहीं बोल पाता या दूसरों द्वारा कही गई बात को सही ढंग से समझ नहीं पाता। भाषाज्ञान की प्रकृति भले ही अमूर्त हो और भाषा-क्षमता भले ही अचेतन स्तर पर हो, पर व्यक्ति अग्रलिखित संदर्भों में उसकी सत्ता का परिचय अवश्य देता है।

(1) **मान्य और अमान्य वाक्यों का भेद**–हर व्यक्ति अपनी भाषा के उन वाक्यों को पहचानने में सक्षम है जो मान्य होते हैं। वाक्य, शब्दों की कड़ी के रूप में बोले जाते हैं। नीचे दिए 'क' वाक्य को तो वह स्वीकार कर लेता है पर 'ख' वाक्य में प्रयुक्त शब्दों की कड़ी को अपनी भाषा का वाक्य नहीं मानता (यद्यपि 'ख' में भी वे ही शब्द हैं जो 'क' में हैं) –

(क) लड़के ने मोहन को किताब दे दी थी।
(ख) ने थी को लड़के दे मोहन दी किताब।

कहने का तात्पर्य यह है कि वाक्य, शब्दों की कड़ी तो होता है पर शब्दों की हर कड़ी वाक्य नहीं होती। हर व्यक्ति न केवल यह बात जानता है, बल्कि अपने भाषाज्ञान के आधार पर मान्य और अमान्य वाक्यों की पहचान की क्षमता भी रखता है।

(2) **'कौन', 'क्या', आदि के रूप में अर्थ**–ग्रहण-शब्दों की कड़ी के रूप में बोले गए वाक्य ऊपर से भले ही एक जैसे दिखते हों, पर व्यक्ति ऊपर से समान दिखाई देने वाले वाक्यों के अर्थभेद को पहचानने की क्षमता रखता है। उदाहरण के लिए नीचे दिए गए वाक्यों को ही लें-

1. (क) मोहन शीला को बेवकूफ़ समझता है।
   (ख) मोहन शीला को बेवकूफ़ लगता है।

2. (क) श्याम ने सीता को कमरा साफ़ करने के लिए कह दिया है।
   (ख) श्याम ने सीता को कमरा साफ़ करने के लिए वचन दिया है।

अगर (1) और (2) के (क) और (ख) वाक्यों की बुनावट पर ध्यान दें, तो शब्दों की कड़ी के रूप में वे समान हैं, पर अगर हम (1) और (2) वाक्य के संदर्भ में पूछें कि 'बेवकूफ़ कौन व्यक्ति है', और 'कमरा किस व्यक्ति को साफ़ करना है', तो उसके जवाब भिन्न-भिन्न होंगे। 1 (क) में बेवकूफ़, शीला ठहरती है जबकि 1 (ख) में मोहन। इसी प्रकार 2 (क) में कमरा सीता को साफ़ करना चाहिए, जबकि 2 (ख) में श्याम को। यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति अपने भाषाज्ञान के आधार पर शब्दों की समान कड़ी के रूप में प्रयुक्त वाक्यों के अर्थभेद पहचानने की क्षमता रखता है।

(3) **संदिग्धार्थ वाक्यों का अर्थभेद**–वाक्य, अर्थ और अभिव्यक्ति की समन्वित इकाई होते हैं। पर भाषा में ऐसे वाक्य भी मिलते हैं जो अभिव्यक्ति के धरातल पर 'एक' होते हैं पर अर्थ के स्तर पर एक से अधिक। उदाहरण के लिए अगर हम कहें–'लड़के ने दौड़ते हुए शेर को मारा', तो अभिव्यक्ति के धरातल पर वाक्य एक होते हुए भी अर्थ के धरातल पर वह दो है जिसका पता इस सवाल से लग सकता है कि 'मारने के समय दौड़ कौन रहा था?' भाषाज्ञान के आधार पर ऐसे संदिग्धार्थ वाक्यों का अर्थभेद संदर्भ के अनुसार करने की क्षमता व्यक्ति रखता है जिसके सहारे एक संदर्भ में वह यह कह सकता है–'लड़के ने जिस समय शेर को मारा, शेर दौड़ रहा था' और दूसरे संदर्भ में वह यह बोल सकता है–'लड़के ने जिस समय शेर को मारा, लड़का दौड़ रहा था।''

(4) **पर्यायवाची वाक्यों का शैली-भेद**–एक ही बात को हम दो या दो से अधिक ढंग से बोल सकते हैं। कभी हम जिसे 'कमल' कहते हैं उसी को 'जलज' या 'नीरज' कहकर भी संकेतित करते हैं। इसी प्रकार हम एक समय बोलते हैं–'आज मैंने एक बहुत मोटा उपन्यास खत्म किया' और दूसरे समय बोलते हैं–'आज मैने जो उपन्यास खत्म किया वह बहुत मोटा था।' अपने भाषाज्ञान के आधार पर व्यक्ति ऐसे पर्यायवाची कथन को पहचानने की क्षमता रखता है, और इसी कारण वह यह कह सकता है कि बात तो वही कही जा रही है, केवल कहने के ढंग में अंतर है।

(5) **अपूर्ण अभिव्यक्ति का अर्थग्रहण**–वाक्य के कुछ अंश को बोलते समय हम अपूर्ण छोड़ देते हैं, फिर भी श्रोता अपने भाषाज्ञान के आधार पर कथन के मन्तव्य को समझ लेता है। हम बोलते हैं–'मोहन किताब पढ़ रहा है और शीला भी', 'लड़का जैसा अच्छा काम कर रहा है वैसा ही लड़की भी'। अपने में 'शीला भी' या 'वैसा ही लड़की भी' अर्थ की दृष्टि से अपूर्ण हैं पर अपने पूर्ववर्ती शब्दों की कड़ी से जुड़कर एक सार्थक अंश बन जाते हैं। अपने भाषाज्ञान के आधार पर श्रोता इन अपूर्ण अंशों के अर्थ को सही ढंग से ग्रहण कर लेने में समर्थ है।

ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट है कि व्यक्ति अपनी भाषा के नियमों को सचेतन ढंग से जाने या न जाने, अपने भाषाव्यवहार से अचेतन रूप से उसका उपयोग अवश्य करता है। अपने इसी भाषाज्ञान के आधार पर वक्ता की भूमिका में वह शब्दों की कड़ी के रूप में व्यवस्थित वाक्य बोलता है और श्रोता की भूमिका में अर्थग्रहण करने में समर्थ होता है।

बोलने के समय वह अर्थ से अभिव्यक्ति की ओर चलता है और सुनने के समय अभिव्यक्ति से अर्थ की ओर। बातचीत करते समय कभी वह बोलता है और कभी सुनता है। इस प्रकार वह अर्थ और अभिव्यक्ति तथा अभिव्यक्ति और अर्थ के सम्बन्धों की दोनों दिशाओं में अपने भाषाज्ञान का उपयोग करता है। अचेतन भाव से वह दोनों दिशाओं में अर्थ और अभिव्यक्ति के सम्बन्धों का निर्वाह करता पाया जाता है। अचेतन मन में सिद्ध इस सम्बन्ध की जानकारी पाना ही वस्तुत: उस भाषा की व्यवस्था को जानना और समझना है।

भाषा-व्यवस्था और भाषिक संरचना

भाषा, केवल शब्दों का जमघंट नहीं। वह केवल शब्दों की कड़ी भी नहीं। वह तो सार्थक शब्दों की एक व्यवस्थित कड़ी है। इसीलिए पहले यह संकेत दिया गया कि भाषा या वाक्य, शब्दों की कड़ी तो होता है पर शब्दों की हर कड़ी वाक्य का दर्जा नहीं पाती। यहाँ यह भी जोड़ देना जरूरी है कि यह व्यवस्था, भाषासापेक्ष होती है और हर व्यवस्था, कुछेक नियमों की अपेक्षा रखती है।

भाषासापेक्ष कहने का मतलब केवल इतना है कि हर भाषा अपने ढंग से शब्दों को कड़ी के रूप में पिरोती है। हिन्दी में अगर हम कर्ता + कर्म + क्रिया के क्रम का निर्वाह करते हुए बोलते हैं-'लड़का किताब पढ़ रहा है' तो अंग्रेज़ी बोलने वाला एक दूसरे क्रम को ही अपनाता है—कर्ता + क्रिया + कर्म। इसी के साथ यह भी कहा जा सकता है कि अगर कहीं व्यवस्था है तो उसके पीछे कुछ नियम भी अवश्य होंगे। ऊपर के उदाहरण से यह स्पष्ट है कि शब्दक्रम का नियम हिन्दी में 'कर्म' को 'क्रिया' के पहले रखने का है, जबकि अंग्रेज़ी में उसे 'क्रिया' के बाद।

ये व्यवस्थापरक नियम ही भाषित संरचना और उस संरचना के आधार पर बने वाक्यों की अभिरचना (पैटर्न) का निर्माण करते हैं। भाषाज्ञान का सम्बन्ध व्यवस्थापरक नियमों के आधार पर वाक्यसृजन की क्षमता से रहता है। भाषाज्ञान से तात्पर्य वाक्यों का सूचीपत्र प्रस्तुत करना नहीं होता। ऐसा सम्भव भी नहीं है, क्योंकि किसी भाषा के संभाव्य वाक्य संख्यातीत होते हैं और किसी भी भाषा के सबसे लंबे वाक्य को बोला या लिखा जाना संभव नहीं। यह हमारी भाषा की सर्जनात्मक शक्ति का प्रमाण है कि हम नए वाक्यों की रचना करने में समर्थ हैं। व्यवस्थापरक नियमों की सर्जनात्मकता और नए वाक्य रचने की क्षमता भाषा को एक खुला आयाम देती है।

भाषा अपनी प्रकृति में कितनी भी खुली और व्यापक क्यों न हो, पर उसके व्यवस्थापरक नियम और उन नियमों के आधार पर बनने वाले वाक्यों की अभिरचना अपनी संख्या में सीमित होती है। व्यक्ति इन सीमित नियमों और अभिरचना के आधार पर ही भाषा की अगाध सम्भावना को साधता है, संख्यातीत वाक्यों को समझने की शक्ति रखता है और नए-नए वाक्यों को बोलने में समर्थ होता है।

खंड 2

भाषिक व्यवस्था और संरचनात्मक स्तर

भाषा, कथ्य और अभिव्यक्ति की समन्वित इकाई है। वह न तो केवल कथ्य है और न ही केवल अभिव्यक्ति। उदाहरण के लिए हम 'कमल' शब्द पर ध्यान दें। यह शब्द एक तरफ़ तथ्य के रूप में 'कमल' फूल के जातिगत अर्थ का बोध कराता है और दूसरी तरफ़ अभिव्यक्ति के रूप में मौखिक या लिखित रूप ग्रहण करता है। कथ्य से रहित अभिव्यक्ति निरर्थक होती है और अभिव्यक्ति से रहित कथ्य असम्प्रेषणीय। अत: कहा जा सकता है कि भाषा के भीतर कथ्य और अभिव्यक्ति एक सिक्के के दो पहलू की तरह आपस में सम्बद्ध रहते हैं। कथ्य और अभिव्यक्ति की समन्वित इकाई के रूप में जब भाषा का अध्ययन किया जाता है, तब उसके तीन निश्चित पक्ष हमारे सामने उभरते हैं–

(i) अभिव्यक्ति पक्ष,
(ii) कथ्य पक्ष, और
(iii) अभिव्यक्ति और कथ्य के सम्बन्धों का पक्ष।

(i) अभिव्यक्ति पक्ष

अभिव्यक्ति पक्ष से तात्पर्य उस माध्यम से है जो कथ्य को व्यक्त रूप देने का साधन बनता है। भाषा व्यवहार के संदर्भ में मूलत: यह माध्यम या तो उच्चारण का रूप लेता है अथवा लेखन का। इसलिए भाषा के दो अभिव्यक्त रूप देखने में आते हैं–मौखिक रूप और लिखित रूप। भाषा का मौखिक रूप माध्यम-सामग्री के रूप में ध्वनि-प्रतीकों को

को स्वीकार करता है। उच्चारण करते समय हम सार्थक ध्वनि-प्रतीकों को जन्म देते हैं और लेखन के समय दृश्य प्रतीकों को। उदाहरण के लिए अगर हम 'कमल' शब्द के कथ्य को अभिव्यक्त रूप देना चाहें, तब या तो हम ध्वनि-प्रतीकों, यथा–'क् + अ + म् + अ + ल्' का सहारा ले सकते हैं अथवा दृश्य चिह्नों का, यथा–'क + म + ल'। यहाँ इस तथ्य पर ध्यान देना आवश्यक है कि ये दोनों माध्यम–भाषा का मौखिक रूप और उसका लिखित रूप अथवा ध्वनि-प्रतीक संयोग और लिपि-प्रतीक–संयोग-एक ही भाषिक इकाई के दो अभिव्यक्त रूप हैं। इसलिए माध्यम भेद से भाषिक इकाइयों की स्वयं की प्रकृति नहीं बदला करती। हम शब्द या वाक्य जैसी सार्थक भाषिक इकाइयों को चाहे बोलकर ध्वनि-माध्यम से अभिव्यक्त करें। अथवा लिखकर उन्हें लिपि-माध्यम से, अपनी मूल प्रकृति में वे शब्द या वाक्य एक ही माने जाएँगे।

(ii) कथ्य पक्ष

कथ्य पक्ष से तात्पर्य भाषित इकाइयों के अर्थ पक्ष से है। अर्थ हमेशा एक सामाजिक एवं संकल्पनात्मक सत्य के रूप में ग्रहण किया जाता है। उदाहरण के लिए 'कमल' शब्द के संकेतार्थ पर ही ध्यान दें। 'कमल' कहने से जिस कथ्य का बोध होता है, वह उसकी जातीय संकल्पना ही है। यह शब्द, किसी कमल विशेष की ओर संकेत नहीं करता। अत: इसके द्वारा हमें लाल, नीले, और सफ़ेद आदि सभी प्रकार के कमल के फूल का अंतर्भाव मिलता है। कहा जा सकता है कि कथ्य पक्ष का सम्बन्ध बाह्य जगत की संकेतित वस्तु से सीधे न होकर उसके संकल्पनात्मक रूप से रहता है।

कथ्य पक्ष एक ओर भाषित इकाइयों के अर्थ से जुड़ा होता है और दूसरी ओर संदर्भ से। साधारण से साधारण वाक्य में निहित कथ्य बिना संदर्भ के स्पष्ट नहीं हो पाता। उदाहरण के लिए 'बैठ' शब्द को ही लें। नीचे दिए गए वाक्यों में इसका अर्थ तब तक स्पष्ट नहीं होता, जब तक हम इस शब्द के प्रयोग के संदर्भों पर ध्यान नहीं देते–

(1) वह कुर्सी पर बैठ गया।

(2) बीमारी की बात सुनकर उसका दिल बैठ गया।

(3) बोलते-बोलते उसका गला बैठ गया।

(4) उसकी आँखे बैठ गईं।

(5) उसका धन्धा बैठ गया।

(6) उसका मकान बैठ गया।

(7) हारने के डर से वह चुनाव में बैठ गया।

इसी प्रकार अगर हम वाक्य के धरातल पर यह कहें–'मोहन ने पिताजी को पत्र नहीं लिखा,' और कथ्य के संदर्भ में यह प्रश्न करें कि इस वाक्य में निषेध किसका है–क्रिया अर्थात् लिखने का अथवा संज्ञा पद पिता जी का, तब उचित उत्तर के लिए हमें संदर्भ का सहारा लेना पड़ता है। वास्तव में यह अनेकार्थी वाक्य है जो अर्थ की स्पष्टता के लिए संदर्भ की अपेक्षा रखता है, यथा–

(1) मोहन ने पिता जी को पत्र नहीं लिखा (लेकिन कल वह अवश्य लिख देगा)।
(2) मोहन ने पिता जी को पत्र नहीं लिखा (बल्कि चाचा जी को लिखा है)।

संदर्भ के दो पक्ष हैं–**भाषेतर** और **भाषिक। भाषेतर पक्ष** का सम्बन्ध उन सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों में रहता है, जो भाषाव्यवहार को नियंत्रित तो करती हैं, परंतु भाषा के भीतर की अपनी वस्तु नहीं होतीं। उदाहरण के लिए नीचे दिए गए तीन वाक्य-प्रयोगों पर ध्यान दें–

1. तू जा।
2. तुम जाओ।
3. आप जाइए।

जहाँ तक कथ्य का सम्बन्ध है, वह इन तीनों वाक्यों में समान है। उद्देश्य के रूप में मध्यम पुरुष सर्वनाम, विधेय के रूप में 'जाना' क्रिया और वृत्ति के रूप में 'आज्ञा' का विधान, इन तीनों को ही वाक्यों में हम पाते हैं। परन्तु इन तीनों वाक्यों का भाषिक कथ्य एक होने पर भी ये वाक्य समानार्थी या पर्याय न होकर भिन्न-भिन्न हैं। इसका कारण यह भी है कि भाषेतर संदर्भ में आज्ञा देने वाले वक्ता और उसके द्वारा सम्बोधित श्रोता के सामाजिक सम्बन्धों की प्रकृति इनमें एक-सी नहीं है। वाक्य (1) में वक्ता-श्रोता के सामाजिक सम्बन्धों की प्रकृति हमें यह सूचना देती है कि प्रसंग मालिक-नौकर अथवा दादा-पोते का हो सकता है, क्योंकि यहाँ वक्ता निश्चित रूप से श्रोता की तुलना में उच्च सामाजिक स्तर पर प्रतिष्ठित है। वाक्य (2) का प्रसंग दो मित्रों अथवा सहयोगियों के वार्तालाप का

हो सकता है; अर्थात् वक्ता-श्रोता दोनों ही समान सामाजिक स्तर से सम्बद्ध हैं। वाक्य (3) में भी भाषेतर संदर्भ ही हमें जानकारी देता है कि वक्ता-श्रोता के दायित्व का निर्वाह यहाँ नौकर-मालिक अथवा पोता-दादा कर रहे हैं अर्थात् श्रोता की तुलना में वक्ता निम्न सामाजिक स्तर का है।

कथ्य के परिप्रेक्ष्य में **भाषिक संदर्भ** से तात्पर्य भाषिक सहप्रयोग से है। भाषा की हर इकाई उसकी हर दूसरी इकाई के साथ प्रयुक्त नहीं होती। हम कहते हैं–'लौह पुरुष', परन्तु भाषिक प्रयोगों का संदर्भ हमें 'लौह महिला' के प्रयोग की अनुमति नहीं देता। इसी प्रकार हम बोलते हैं–'खाना खाना', लेकिन 'भोजन' और 'जलपान' के संदर्भ में हम कहते हैं– 'भोजन करना' और 'जलपान करना'। भाषिक संदर्भ हमें 'खाना करना', 'भोजन खाना' और 'जलपान खाना' जैसे प्रयोगों की अनुमति या छूट नहीं देता। (अगर हम 'खाना करना' प्रयोग को 'दावत देना' अर्थ में स्वीकार्य अथवा मान्य मानें, तब यहाँ उसका अर्थ बदल जाता है।)

(ii) कथ्य और अभिव्यक्ति के सम्बन्धों का पक्ष

यह पक्ष मूलत: भाषा के रूप (संरचना) का क्षेत्र है। यह कहा जा सकता है कि भाषा अपनी मूल प्रकृति में शाब्दिक इकाइयों के बीच सम्बन्धों की व्यवस्था है और व्याकरण, विभिन्न स्तरों पर इन सम्बन्धों की व्यवस्था का अध्ययन करता है। एक दूसरे संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि भाषा में कथ्य और अभिव्यक्ति की एकता बनी रहती है और व्याकरण, सम्बन्धों के रूप में पाई जाने वाली एकता का अध्ययन करता है। अगर हम भाषा की एक सार्थक इकाई 'वाक्य' को लें, तब हमें उसके दो स्पष्ट पक्ष दिखाई पड़ते हैं–(क) शब्द और (ख) शब्द-सम्बन्धों की व्यवस्था अर्थात् व्याकरण। उदाहरण के लिए इस वाक्य पर ध्यान दें–'लड़के ने चिट्ठी लिखी'। इस वाक्य में तीन शब्द हैं–'लड़का', 'चिट्ठी' और 'लिखना'। जिस व्याकरणिक व्यवस्था के आधार पर इन शब्दों में सम्बन्ध बना, उसका रूप है–'कर्ता + कर्म + क्रिया'। इसी व्यवस्था के संदर्भ में 'लड़का', 'लिखना' शब्दों का रूप-परिवर्तन हुआ है, यथा–'लड़के ने' और 'लिखी'।

ऊपर की विवेचना से स्पष्ट है कि रूप या संरचना का एक स्तर शब्द और शब्द-समूह का है और दूसरा स्तर वाक्य-संरचना और व्याकरणिक व्यवस्था का है। इन्हें हम भाषिक इकाइयों से सम्बद्ध संरचना के स्तर कह सकते हैं। संरचना और व्यवस्था के दो अन्य संदर्भ

हैं। पहले संदर्भ का सम्बन्ध अभिव्यक्ति-माध्यम की संरचनात्मक व्यवस्था से है। इसे हम अभिव्यक्ति-माध्यम का स्तर कह सकते हैं। जैसा पहले संकेत दिया जा चुका है, इसके दो पक्ष हैं—मौखिक भाषारूप से सम्बद्ध ध्वनि-व्यवस्था का स्तर और लिखित भाषारूप से सम्बद्ध वर्ण (लेखन)-व्यवस्था का स्तर। दूसरे संदर्भ का सम्बन्ध सम्प्रेष्य (कथ्य) की संरचनात्मक व्यवस्था से है। सम्प्रेष्य कथ्य, भाषा के जिस स्तर की अपेक्षा रखता है उसे 'अर्थ' की संज्ञा दी जा सकती है।

स्पष्ट है कि कथ्य और अभिव्यक्ति के सम्बन्धों की व्यवस्था के निम्नलिखित तीन निश्चित संदर्भ और चार निर्धारित स्तर हैं।

भाषा के तीन संदर्भ-

(1) अभिव्यक्ति/माध्यम का संदर्भ
(2) भाषित रूप का संदर्भ
(3) सम्प्रेष्य/कथ्य का संदर्भ

भाषिक व्यवस्था के चार स्तर-

(1) ध्वनि/लिपि-व्यवस्था का स्तर,
(2) शब्द और शब्द-संरचना का स्तर,
(3) वाक्य और वाक्य-संरचना का स्तर,
(4) अर्थ-व्यवस्था का स्तर।

भाषा अध्ययन के इन तीनों संदर्भों एवं व्यवस्था से सम्बद्ध चार स्तरों को हम निम्नलिखित चित्र द्वारा समझ सकते हैं—

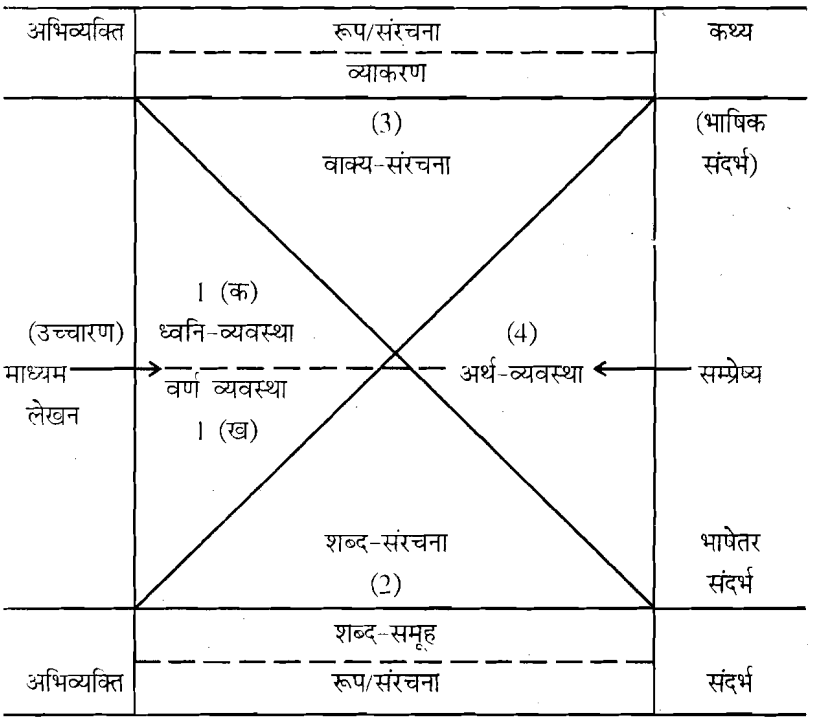

चित्र : 1

कुछ उदाहरणों द्वारा हम इन विभिन्न स्तरों पर पाई जाने वाली भाषिक इकाइयों के बीच सम्बन्धों की व्यवस्था की प्रकृति को स्पष्ट कर सकते हैं। **अभिव्यक्ति-माध्यम के स्तर पर** 'कलश' शब्द को ही लें। अगर हम इसके ध्वनि-प्रतीकों पर ध्यान दें तो हमें एक निश्चित क्रम का निर्वाह मिलता है, यथा–'क् + अ + ल् + अ + श'। साथ ही प्रतीक-चिह्न के रूप में हमें निश्चित ध्वनियों का चयन भी देखने को मिलता है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रतीकों के चयन में हमें सबसे पहले 'क' और उसके बाद 'ल' और सबसे अंत में 'श' की स्थिति दिखाई देती है। ध्वनियों के इस क्रम को बदलने पर अभिव्यक्ति भी बदल जाती है। वह या तो 'शक्ल' के रूप में एक दूसरा ही शब्द बन जाती है अथवा 'लशक, शलक, कशल' के रूप में निरर्थक हो जाती है। इसी प्रकार 'कलश' शब्द में आए 'क + ल + श' ध्वनि/लिपि-प्रतीकों में से किसी एक को भी अगर

हम किसी दूसरे ध्वनि/लिपि-प्रतीक द्वारा परिवर्तित करते हैं, तब भी अभिव्यक्ति बदल जाती है। अंतिम 'श' ध्वनि-प्रतीक को यदि हम 'म' अथवा 'ह' द्वारा बदलें तो हमें 'कलम' और 'कलह' के रूप में सार्थक लेकिन भिन्न शब्द मिलते हैं। प्रतीकों का परिवर्तन अभिव्यक्ति को निरर्थक भी बना देता है, यथा–आदि 'क' प्रतीक के स्थान पर 'च, त, या प' रखने पर क्रमशः प्राप्त 'चलश, तलश, या पलश' शब्द; मध्य में आए 'ल' ध्वनि-प्रतीक के स्थान पर 'र' अथवा 'ब' रखने पर क्रमशः प्राप्त 'करश, कवश' शब्द; अत्य 'श' के स्थान पर 'ब' या 'न' रखने पर क्रमशः प्राप्त 'कलब' कलन' शब्द। ये सभी अभिव्यक्तियाँ निरर्थक कहलाएँगी। स्पष्ट है, अभिव्यक्ति-स्तर पर व्यवस्था मुख्यतः दो पक्षों को अपने भीतर समेटती है–(1) ध्वनि/लिपि-प्रतीकों का चयन और (2) ध्वनि/लिपि-प्रतीकों का क्रमिक संयोजन।

शब्द-स्तर की इकाइयों के बीच पाई जाने वाली व्यवस्था के संदर्भ में भी यही स्थिति देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए हम 'सम्मानित' या 'अशुद्धता' शब्दों को ही लें यह कहा जा सकता है कि सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में इनके तीन सार्थक अंश–प्रत्यय + मूल शब्द + प्रत्यय-जुड़े हुए हैं। पूर्वप्रत्यय के रूप में 'सम्' अथवा 'अ'; मूल शब्द के रूप में 'मान' अथवा 'शुद्ध' तथा प्रत्यय के रूप में 'इत' अथवा 'ता', यथा–सम् + मान + इत अथवा अ + शुद्ध + ता। इन शब्दों में आए हुए पूर्व प्रत्यय, मूल शब्द और प्रत्यय के क्रम को अगर हम बदलकर लिखें, तो शब्द के धरातल पर वह निरर्थक हो जाता है, यथा–'इतमानसम्'सम्इतमान, मानसमइत', और 'ताशुद्धअ, अताशुद्ध, शुद्धताअ'। इसी प्रकार अगर हम 'सम्' को 'अप' पूर्व प्रत्यय से परिवर्तित करें तो हमें दूसरा ही शब्द 'अपमानित' मिलेगा। यह देखा जा सकता है कि शब्द के सार्थक अंश के क्रम में परिवर्तन लाने अथवा उनके स्थानांतरण से या तो शब्द निरर्थक हो जाते हैं अथवा उससे भिन्न दूसरे शब्द बन जाते हैं।

वाक्य-स्तर पर भी इकाइयों की व्यवस्था-सम्बन्धी यही स्थिति देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए–'मोहन ने सोहन को किताब दी' वाक्य को ले सकते हैं। इस वाक्य में हिंदी के व्याकरण से अनुमोदित सम्बन्धों की व्यवस्था दिखाई देती है, अतः यह हिंदी का स्वीकृत व्याकरण-सम्मत वाक्य है। इस वाक्य की शाब्दिक इकाइयों का क्रम बदलकर अलग हम लिखें–'दी ने को सोहन लौटा किताब मोहन' तो शाब्दिक इकाइयाँ वही रहने पर भी वाक्य निरर्थक हो जाता है, क्योंकि इकाइयों के बीच की व्यवस्था के

नियम का पालन यहाँ नहीं है। इसी तरह, इस वाक्य में अगर हम 'मोहन' और 'सोहन' को क्रमशः स्थानांतरित कर दें, तो सम्प्रेप्य कथ्य बदल जाता है, यथा–'सोहन ने मोहन को किताब दी।' यहाँ सोहन गौण कर्म के स्थान पर कर्त्ता बन गया है, जिसके कारण अर्थ में परिवर्तन आ गया है।

अर्थ के स्तर पर भी व्यवस्थापक नियम देखे जा सकते हैं। अभिव्यक्ति एवं वाक्य-रचना की दृष्टि से वाक्य शुद्ध हो सकता है पर यह सम्भव है कि अर्थ-विसंगति के कारण वह वाक्य अमान्य हो। उदाहरण के लिए हम इस उक्ति को ही लें–'वह आग से सींचता है'। यह वाक्य, अभिव्यक्ति तथा व्याकरण की दृष्टि से संगत एवं शुद्ध होने पर भी अर्थ की दृष्टि से विसंगतिपूर्ण है। वास्तव में 'सींचना' क्रिया और 'आग' के बीच अर्थ-संगति न होने से यहाँ कथ्य विसंगतिपूर्ण हो गया है। इसी प्रकार निम्नलिखित प्रयोग में भी अर्थ की विसंगति स्पष्ट है–'उसने आज वह घड़ा फोड़ दिया, जिसे कल उसे बनाना है।' अर्थ की विसंगति का कारण यहाँ मुख्य उपवाक्य (उसने आज वह घड़ा फोड़ दिया) और आश्रित उपवाक्य (जिसे कल उसे बनाना है) के बीच अर्थ-सम्बन्धों की अव्यवस्था है, क्योंकि हम यह कह सकते हैं–'उसने आज वह घड़ा फोड़ दिया जिसे कल उसे बेचना है।' ध्यान देने की बात है कि इन मुख्य और आश्रित उपवाक्यों के बीच तर्कजन्य कार्य-कारण सम्बन्धी व्यवस्था का निर्वाह हमें दूसरे वाक्य में देखने को मिलता है, पर वाक्य-रचना की दृष्टि से शुद्ध होने पर भी ऐसा निर्वाह पहले वाक्य में नहीं मिलता।

कथ्य और अभिव्यक्ति की समन्वित इकाई के रूप में भाषा का अध्ययन करते समय हमें इसके विभिन्न स्तरों पर व्यवस्थापरक नियमों को ध्यान में रखना चाहिए। ये व्यवस्थापरक नियम ही भाषिक संरचना का निर्माण करते हैं।

खंड 3

भाषा और भाषिक संरचना

भाषा-अध्ययन के दो संदर्भ हैं–प्रयोजनपरक और संरचनापरक। प्रयोजनपरक संदर्भ के विषय में कहा जा सकता है कि भाषा, सम्प्रेष्ण का एक अन्यतम उदाहरण है। भाषा के सहारे व्यक्ति न केवल अपने विचार को व्यक्त करता है बल्कि उसे दूसरे तक सम्प्रेषित

भी करता है। सम्प्रेषण-व्यापार के संदर्भ में यह देखा जा सकता है कि इसके एक छोर पर वक्ता (लेखक) होता है जो किसी संदेश विशेष को भेजता है और दूसरे छोर पर श्रोता (पाठक) रहता है जो इस संदेश को ग्रहण करता है। वक्ता और श्रोता के संदेश की पृष्ठभूमि में भाषा रहती है। इसी भाषा के सहारे वक्ता अपने अव्यक्त संदेश को व्यक्त करता है और भाषा में इसी अभिव्यक्ति संदेश को श्रोता सुनकर अर्थ के रूप में ग्रहण करता है। अगर अभिव्यक्ति का माध्यम लेखन और लिपि-व्यवस्था है तो व्यक्ति उसे पढ़कर अर्थ ग्रहण करता है। अत: भाषा का प्रयोजनपरक संदर्भ सम्प्रेषण की आवश्यकता पर बल देते हुए यह संकेत देना चाहता है कि भाषा, सम्प्रेषण व्यापार का एक समर्थ साधन है। इस संदर्भ में यह भी कहा जा सकता है कि भाषा के इस सम्प्रेषण-व्यापार के सहारे ही व्यक्ति अपने भाषायी समुदाय के अन्य सदस्यों के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है, उनके साथ विचार-विनिमय करता है और एक-दूसरे का सहयोग प्राप्त करता है।

संरचनापरक संदर्भ का सम्बन्ध भाषा की प्रकृति में रहता है। यह संदर्भ इस पक्ष पर प्रकाश डालता है कि भाषा क्या है, न कि भाषा क्या करती है। यह बात ध्यान देने की है कि भाषाशिक्षण के संदर्भ में हम जिस भाषा की बात करते हैं, वह वस्तुत: 'मानव-भाषा' का एक प्रकार है, जैसे–हिंदी, गुजराती, तमिल, तेलुगु, अंग्रेजी, फ्रेंच आदि। सम्प्रेषण-व्यवस्था के व्यापक संदर्भ में हम कभी-कभी 'भाषा' शब्द का प्रयोग अन्य संदर्भों में भी करते हैं। हम कभी 'पशु-पक्षियों' के सम्प्रेषण-व्यापार को भी 'भाषा' मान लेते हैं और आँखों से व्यक्त होने वाले सूचना-व्यापार को भी 'आँखों की भाषा' की संज्ञा दे बैठते हैं। वस्तुत: इन संदर्भों में हम भाषा का लाक्षणिक अर्थों में प्रयोग करते हैं अन्यथा मानव-भाषा अपनी प्रकृति में गुणात्मक स्तर पर इनसे भिन्न एक वस्तु है। यह मानव-भाषा ही है जिसके सहारे न केवल हम बोलते हैं वरन 'बातचीत करते' हैं, और यह मानव-भाषा की अपनी प्रकृति का ही परिणाम है कि हम उसके सहारे एक ओर विगत घटनाओं पर विचार कर सकते हैं और दूसरी ओर भविष्य की सम्भावित घटनाओं की कल्पना भी।

(1) भाषा का संरचनात्मक संदर्भ

ऊपर संकेत दिया जा चुका है कि भाषा का संरचनात्मक संदर्भ यह बताता है कि भाषा, 'क्या' है। इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि 'भाषा, सार्थक प्रतीकों की एक व्यवस्थित कड़ी है'। यह परिभाषा भाषा की सार्थक इकाइयों को भी परिभाषित करने में समर्थ है।

उदाहरण के लिए अगर हम उसकी महत्त्वपूर्ण इकाई 'वाक्य' की प्रकृति पर प्रकाश डालना चाहें, तो कह सकते हैं कि 'वाक्य, अनुशासित शब्दों की एक व्यवस्थित कड़ी है।'

हम चाहे 'भाषा' की बात करें या वाक्य, उपवाक्य, पदबंध, पद आदि, उसकी सार्थक इकाइयों की, वे सभी संरचनात्मक नियमों में बँधकर ही व्यक्त होते हैं। उदाहरण के लिए भाषा की एक महत्त्वपूर्ण इकाई के रूप में वाक्य के निम्नलिखित लक्षण देखें जा सकते हैं–

(1) वाक्य में प्रयुक्त शब्द अनुशासित होते हैं।

वाक्य अपने से छोटी इकाइयों के संयोग से बनता है। अगर हम वाक्य से छोटी इकाई के रूप में 'शब्द' को स्वीकार कर लें, तो वाक्य शब्दों के संयोग से निर्मित माना जा सकता है। पर वाक्य में प्रयुक्त शब्द, मात्र शब्द नहीं होता। वह तो 'अनुशासित शब्द' है। अनुशासित कहने का यहाँ अर्थ यह है–संरचना के नियमों के अनुसार अपना रूप ग्रहण करना। उदाहरण के लिए नीचे दिए गए दो प्रकार के शब्द-संयोग पर ध्यान दें–

(1) * (क) लड़का बात कहा।
(ख) लड़के ने बात कही।

(क) के शब्द-संयोग के आधार पर निर्मित वाक्य को हम हिंदी का वाक्य नहीं कह सकते, क्योंकि यहाँ हमें शब्दों का अनुशासित रूप नहीं दिखलाई देता। पर अगर हम 'लड़का' और 'कहा' के स्थान पर उनके सही शब्द रूप जैसे 'लड़के ने बात कही' के साथ व्यक्त करें, तो यह हिंदी भाषा का स्वीकृत वाक्य बन जाता है, जैसा हम ऊपर दिए (ख) उदाहरण में देखते हैं–'लड़के ने बात कही'।

(2) वाक्य में शब्द एक व्यवस्थित कड़ी के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

यह ध्यान देने की बात है कि वाक्य न तो शब्दों का जमघट है और न शब्दों की मात्र कड़ी। यही कारण है कि वाक्य, शब्दों की कड़ी तो होता है पर शब्दों की हर कड़ी वाक्य का दर्जा नहीं पाती। उदाहरण के लिए नीचे दी गई दो शब्द-शृंखलाओं को ही लें–

2. * (क) रहा पीट है को मोहन सोहन।
(ख) मोहन सोहन को पीट रहा है।

ऊपर के दोनों वाक्यों में शब्दों की न केवल संख्या समान है किंतु शब्द भी एक जैसे हैं। पर हिंदी भाषा केवल (ख) वाक्य की शब्द शृंखला की व्यवस्था को स्वीकार करती है। हिंदी भाषा की व्यवस्था के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि शब्दों की कड़ी के रूप में वाक्य (क) की व्यवस्था अस्वीकार्य है।

वस्तुतः, भाषा और उसकी सभी सार्थक इकाइयाँ; यथा-वाक्य, पदबंध, शब्द आदि-व्यवस्था-सापेक्ष होती हैं। हर व्यवस्था कुछ नियमों की अपेक्षा रखती है। जब ये नियम टूटते हैं, तब भाषा के प्रयोग 'अशुद्ध' और 'अमान्य' हो जाते हैं। ये व्यवस्थापरक नियम ही भाषिक संरचना का निर्माण करते हैं। इस तथ्य को ठीक ढंग से समझने के लिए यह ज़रूरी है कि हम जानें कि संरचना स्वयं में क्या है।

यह कहा जा सकता है कि किसी वस्तु या इकाई की संरचना उस वस्तु या इकाई के भीतर पाए जाने वाले 'सम्बन्धों की व्यवस्था' है। उदाहरण के लिए अगर हम ऊपर दिए 2 (क) और 2 (ख) वाक्यों पर ध्यान दें तो स्पष्ट हो जाता है कि 2 (क) अर्थात् 'रहा पीट है को मोहन सोहन' में सम्बन्धों की व्यवस्था नहीं है। अगर हम इस वाक्य से यह जानना चाहें कि मोहन और सोहन संज्ञा शब्दों में क्या सम्बन्ध है, पीटने क्रिया के साथ मोहन और सोहन का क्या सम्बन्ध है, या कौन, किसे पीट रहा है, तो हमें इसका उत्तर नहीं मिल पाता। इसके विपरीत अगर इन्हीं प्रश्नों के संदर्भ में 2 (ख) वाक्य (मोहन सोहन को पीट रहा है) को देखें, तो उनका उत्तर मिल जाता है। इसका कारण यही है कि इस वाक्य में 'सम्बन्धों की व्यवस्था' है, जिसके आधार पर हम सहज ही यह जान लेते हैं कि मोहन और सोहन में कौन 'पीटनेवाला' है और कौन 'पिटनेवाला'।

भाषिक संरचना की प्रकृति को ठीक से समझने के लिए नीचे दिए गए दो वाक्यों पर ध्यान दें–

3. मोहन कल आएगा
4. सोहन आम खाएगा।

दोनों ही वाक्यों में तीन-तीन शब्द हैं, और दोनों ही व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध हैं। पर अमूर्त व्याकरणिक रूप में वाक्य (3) जहाँ (संज्ञा + क्रिया, विशेषण + क्रिया) के क्रम का निर्वाह कर रहा है, वहाँ वाक्य (4) में शब्दक्रम है (संज्ञा + संज्ञा + क्रिया) यहाँ यह

पूछा जा सकता है कि इन दोनों वाक्यों में प्रयुक्त होने वाले संज्ञा या क्रिया शब्दों के प्रकार्य क्या एक ही हैं, या वाक्य (4) में प्रयुक्त दो संज्ञा शब्दों के प्रकार्य क्या समान हैं? इन दोनों वाक्यों की भाषिक संरचना पर थोड़ा और गहराई से विचार करने पर स्पष्ट हो जाता है कि इन दोनों वाक्यों की संरचना में अंतर है, क्योंकि अपने अमूर्त और प्रकार्यात्मक स्तर पर इनकी प्रकृति निम्नलिखित है-

5. (क) कर्ता + क्रियाविशेषण + अकर्मक क्रिया
6. (ख) कर्ता + कर्मा + सकर्मक क्रिया

भाषिक संरचना अपने प्रकार्य के आधार पर शब्द-सम्बन्धों का एक नया आयाम खोलती है। यह आयाम किसी एक वाक्य में प्रयुक्त और व्यक्त शब्दों के साथ अप्रयुक्त और अव्यक्त उन शब्दों के सम्बन्ध का संदर्भ है जो भाषा की सम्भाव्य इकाई हैं, भले ही उनका उस वाक्य में प्रयोग न हुआ हो। उदाहरण के लिए अगर वाक्य (3) की संरचना को लें, तो 'मोहन' के स्थान पर हम 'सोहन, लड़का, वह' आदि किसी भी शब्द का प्रयोग कर सकते हैं। इसी प्रकार 'कल' और 'आयेगा' के स्थान पर क्रमशः 'आज, परसों, अभी' और 'सोएगा, जाएगा, दौड़ेगा' आदि शब्दों का। पर वाक्य (3) में 'मोहन' के स्थान पर अगर भाववाची संज्ञा शब्द 'सौन्दर्य, विश्वास, दया' का प्रयोग करेंगे तो वह अशुद्ध हो जाएगा। इसी प्रकार वाक्य (4) में 'खाएगा' क्रिया शब्द के स्थान पर 'लाएगा, धोएगा, काटेगा' का प्रयोग तो सम्भव है पर अगर उसके स्थान पर हम 'आएगा, सोएगा, जाएगा' में से किसी एक का भी प्रयोग करें तो वाक्य अशुद्ध हो जाएगा।

ऊपर की विवेचना के संदर्भ में हम कह सकते हैं कि व्यवस्थापरक नियमों और व्याकरणिक प्रकार्य के आधार पर भाषिक इकाइयों के भीतर पाए जाने वाले सम्बन्धों की व्यवस्था उस इकाई की संरचना है। यह इकाई भाषा के किसी भी स्तर पर देखी जा सकती है; यथा–प्रोक्ति, वाक्य, पदबंध, शब्द आदि।

यहाँ कुछेक तथ्यों पर ध्यान देना आवश्यक है। पहला, सम्बन्धों की व्यवस्था, भाषासापेक्ष होती है। दूसरा, हर व्यवस्था कुछेक नियमों की अपेक्षा रखती है। तीसरा, व्यवस्थापरक नियमों की प्रकृति सर्जनात्मक होती है।

भाषासापेक्ष कहने का अर्थ केवल इतना है कि हर भाषा अपने ढंग से शब्दों को कड़ी के रूप में पिरोती है। हिंदी में अगर हम कर्ता + कर्म + क्रिया के क्रम का निर्वाह करते

हुए बोलते हैं-'लड़का किताब पढ़ रहा है' तो अंग्रेजी में एक दूसरे ही क्रम का निर्वाह करते हैं—कर्ता + क्रिया + कर्म। इसी के साथ यह भी कहा जा सकता है कि कहीं अगर व्यवस्था है तो उसके पीछे नियम भी अवश्य होंगे। ऊपर के उदाहरण से स्पष्ट है कि शब्द-क्रम का नियम हिंदी में कर्म को क्रिया के पहले रखने का है, जबकि अंग्रेजी में उसे क्रिया के बाद।

संरचना पर आधारित ये व्यवस्थापरक नियम ही हमारे भाषाज्ञान के मूल आधार बनते हैं। भाषाज्ञान से हमारा तात्पर्य—शुद्ध वाक्यों का सूचीपत्र नहीं होता। किसी ऐसे सूचीपत्र का ज्ञान सम्भव भी नहीं जो भाषा के हर सम्भव शुद्ध वाक्य को अपने भीतर समेटता हो, क्योंकि किसी भी भाषा के सम्भाव्य वाक्य संख्यातीत होते हैं और किसी भी भाषा के सबसे लम्बे वाक्य का बोला या लिखा जाना असम्भव है। यह हमारी भाषा की सर्जनात्मक शक्ति का प्रमाण है कि हम भाषिक संरचना के आधार पर नये-नये वाक्यों की रचना करने में समर्थ हैं। इस बात पर बल देने की आवश्यकता है कि संरचनात्मक नियमों की सर्जनात्मकता और नये-नये वाक्य रचने की हमारी क्षमता ही भाषा को एक खुला आयाम देती है।

(2) संरचना और संरचनात्मक नियमों की प्रकृति

ऊपर की विवेचना के परिप्रेक्ष्य में संरचना की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए उसके निम्नलिखित लक्षणों की ओर संकेत दिया जा सकता है—

(1) किसी भाषिक इकाई की संरचना उस इकाई के भीतर स्थित 'सम्बन्धों की व्यवस्था' है।

उदाहरण के लिए अगर हम वाक्य (इकाई) के स्तर पर दो वाक्यों को लें— (क) मोहन कल आएगा, और (ख) मोहन आम खाएगा, तो हम देखते हैं कि दोनों वाक्यों में तीन-तीन शब्द हैं, पर इन शब्दों के आपसी सम्बन्धों की व्यवस्था के संदर्भ में ये दो भिन्न-भिन्न संरचनाओं के उदाहरण हैं।

(2) संरचना का सम्बन्ध इकाई के रूप (आकृति) के साथ रहता है न कि उसकी अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ।

भाषा अपनी व्यवस्था में रूप है। इस रूप को भाषा-व्यवहार के संदर्भ में अभिव्यक्ति करने की आवश्यकता पड़ती है। भाषा के संदर्भ में अभिव्यक्त रूप, ध्वनि का माध्यम चुनता है या फिर 'लिपि' का। पर किसी वाक्य को हम चाहे ध्वनि के सहारे बोलकर व्यक्त करें, चाहे लिपि के सहारे लिखकर, 'रूप' के धरातल पर वाक्य वही रहता है। संरचना का सम्बन्ध 'रूप' से रहता है, अत: अभिव्यक्ति-माध्यम के भेद से उसकी संरचना नहीं बदलती।

(3) संरचना बोधात्मक यथार्थ है न कि अभिव्यक्तिपरक तथ्य।

संरचना अपनी प्रकृति में अमूर्त और संकल्पनात्मक होती है। उदाहरण के लिए अगर इकाई के रूप में हर यह वाक्य लें– 'मोहन आम खाएगा', तो इसका संरचनात्मक रूप होगा–कर्ता + कर्म + सकर्मक क्रिया। इस संरचना के बोधात्मक यथार्थ के संदर्भ में 'मोहन आम खाएगा' कथन मात्र अभिव्यक्तिपरक तथ्य समझा जाएगा, क्योंकि ऐसे अन्य कई वाक्य सम्भव हैं; यथा–मोहन फल खाएगा, शीला चिट्ठी लिखेगी, राकेश लकड़ी काटेगा, राधा खाना बनाएगी आदि। यह ध्यान देने की बात है कि संरचना के बोधात्मक यथार्थ के धरातमल पर ये सभी वाक्य 'समान' हैं, जबकि अभिव्यक्तपरक तथ्य के रूप में यह वाक्य भिन्न-भिन्न माने जाएँगे।

(4) संरचनात्मक इकाई का आधार उसके अंगों के बीच पाए जाने वाले सम्बन्धों का प्रकार्य होता है।

संरचना, सम्बन्धों की व्यवस्था होती है। पर ये सम्बन्ध भाषिक इकाइयों के प्रकार्य पर आधारित होते हैं। उदाहरण के लिए दो वाक्यों को ही लें–(क) मोहन घर आएगा और (ख) पत्र घर आएगा। इन दो वाक्यों की संरचना भिन्न है, क्योंकि 'मोहन' (संज्ञा) जिस प्रकार्य की ओर संकेत दो रहा है उससे भिन्न 'पत्र' (संज्ञा)। पहले वाक्य में संज्ञा (मोहन) सजीव कर्ता है जो क्रिया (आने का काम) का सम्पादन स्वयं करनेवाला है, जबकि दूसरे वाक्य में संज्ञा (पत्र) निर्जीव है। अत: आने की क्रिया का सम्पादन वह स्वयं नहीं करने वाला है। यह संरचनात्मक प्रकृति का ही अंतर है कि (क) संरचना के विस्तार के रूप में हम कह सकते हैं–'मोहन जान-बूझकर घर नहीं आया।' पर (ख) के संदर्भ में हम यह नहीं कह सकते–'पत्र जान-बूझकर घर नहीं आया'।

यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है कि भाषा अपने प्रयोगगत संदर्भ में अगाध और सीमामुक्त होती है। उसके वाक्य संख्यातीत होते हैं। हम रोज नये-नये वाक्यों का प्रयोग करते हैं। यह सम्भव नहीं कि जितने वाक्य हम बोलें, उतने ही नियमों को भी याद रखें। वस्तुतः संरचनात्मक नियम अपनी संख्या में सीमित होते हैं पर उनकी प्रकृति सर्जनात्मक होती है। इन सीमित पर सर्जनात्मक नियमों के आधार पर ही हम संख्यातीत वाक्यों को व्यवहार में लाने में समर्थ हो पाते हैं।